

आनंद-दर्पण

मनुष्य अपने स्वरूपभूत सच्चे और शाश्वत आनन्द को कैसे उपलब्ध हो सकता है? इस संबंध में संत शिरोमणि बालयति बाबा भूमनशाहजी के आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक सदुपदेशों का सार।

चन्द्रस्वामी उदासीन



आनंद-दर्पण

चन्द्रस्वामी उदासीन

प्रकाशक

सीकर्स ट्रस्ट
साधना केन्द्र आश्रम
ग्राम–डुमेट, पोस्ट–अशोक आश्रम (डाकपत्थर),
विकासनगर, जनपद–देहरादून,
उत्तराखण्ड, भारत, पिन–248125
दूरभाष–01360-222204

द्वितीय संस्करण
5000 प्रतियाँ

ISBN: 978-81-89764-14-2

मुद्रक
शिवा ऑफसैट प्रेस14, ओल्ड कनाट प्लेस, देहरादून, उत्तराखण्ड



बालयति और परम सिद्ध, भूमनशाह देव महान्।
मोह-माया-तम-दुःख हर्त्ता को, बारम्बार प्रणाम।।

बाबाजी को भौतिक शरीर छोड़े दो सौ बासठ वर्ष हो गये परन्तु आज भी वे सच्चे साधकों का आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शन करते हैं और आपने अनन्य भक्तों के कष्ट प्रत्यक्ष प्रकट होकर दूर करते हैं — ऐसा अनेक साधकों का अनुभव है।



परमपूज्य उदासीनाचार्य भगवान् श्रीचन्द्रजी

एवं

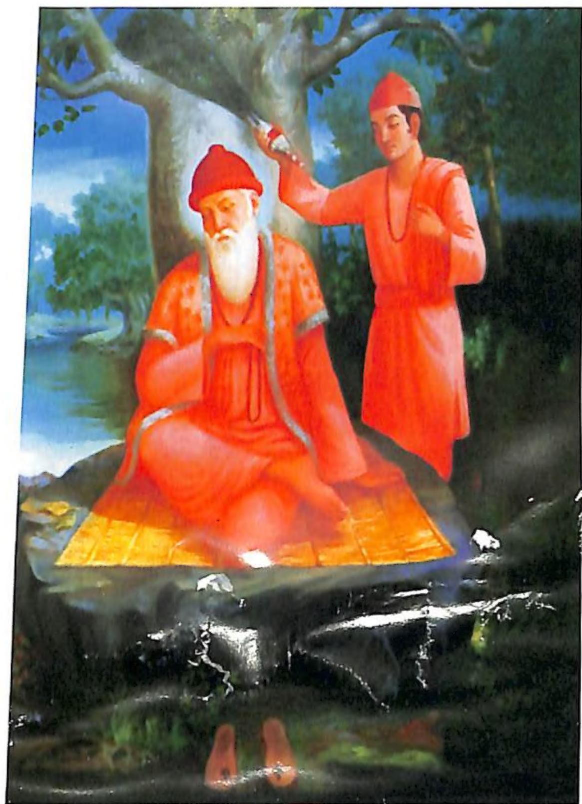
बालयति बाबा भूमनशाहजी

की मधुर स्मृति में सादर-सप्रेम समर्पित।



उदासीनाचार्य भगवान् श्रीचन्द्रजी





बालयति दाता भूमनशाहजी उदासीन



प्रार्थना

हे परमदेव प्रभु! आप परमशुद्ध अनन्त शक्तिस्वरूप, अनन्त ज्ञानस्वरूप, अनन्त आनन्दस्वरूप, अनन्त प्रेम एवं ज्योतिस्वरूप हैं। हे परमकृपालु, देवाधिदेव! आपको नमस्कार हो, बार-बार नमस्कार हो।

हे विश्वमय एवं विश्वातीत, एकमेव अद्वितीय [illegible]श्वर! मैं आपकी शरण हूँ; मुझे अपना [illegible] बना लो; मुझे सँभाल लो। प्रभु! मैं आपका हूँ; आपका ही हूँ; [illegible] हूँ, आपकी शरण हूँ।

हे सर्वेश्वर! मेरा शरीर स्वस्थ हो; मेरी इन्द्रियाँ निर्मल हों; मेरी भावनायें पवित्र हों; मेरी बुद्धि सुस्थिर हो।

हे प्रभु! मेरा समुच्चय जीवन पवित्र व विकसित बनकर, आपके भजन-स्मरण में, आपके चिन्तन में व आपकी सेवा में व्यतीत हो। परमकृपालु! मुझे ऐसा बल दो, कि मैं आपको देख सकूँ, सत्य को देख सकूँ।

हे पूर्ण! मेरी अपूर्णताओं को पूर्णता में बदल दो, मुझे अपने में मिलाकर पूर्ण कर लो।

सभी सद्गामी हों; सभी सुखी हों; सभी प्रेम से रहें; सभी का कल्याण हो।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः ! शान्तिः !

बाबा भूमनशाहजी की आरती

भूमनशाह की करें आरती, संत शिरोमणि देवा।
अड़सठ तीर्थस्नान का फल दे, श्री चरनन की सेवा।।

बालयति और बालसिद्ध प्रभो,
शान्त सौम्य सुखकारी।
सत्-चित्-आनन्द प्रेमसुधा निधि,
दिव्य रूप मनहारी।।
बाबा श्रीचन्द्र रूप तुम्ही हो,
अति करुणा अवतारा।
दुखियन सेवा सिमरन हरि को,
यह संदेश तुम्हारा।।
समदर्शी और अन्तर्यामी,
कोमल कृपानिधाना।

सब विधि समरथ भक्त उधारन,

प्रेम-ज्ञान दो दाना।।

ज्ञान भक्ति और कर्मयोग से,

पथ दरसावे भक्तन का।

दुराचार कुविचार मिटा कर,

हरे मैल-मल जन-जन का।।

विषय विकार मिटावन हारे,

करुणामय गुणसागर।

तिमिर हटा कर ज्योति जगाकर,

अन्तर करे उजागर।।

सत्य पुरुष पितुमात समाना,

हे प्रभु सुहृद महाना।

हम बालक निर्बोध अजाना,

कृपा करो भगवाना।।

शुद्ध भाव और निर्मल बुद्धि,

दो प्रभु दीन दयाला।

संयम शील नमरता दीजै,

बिन कारण किरपाला।।

दुःख संकट सब दूर हो जाये,

शरण तेरी जो आये।

जो जन तेरी आरती गाये,

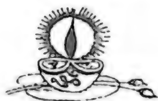
भवसागर तर जाये।।

दिव्य दृष्टि के देवन हारे,

भगतन के रखवारे।

'चन्द्र' भरोसे पूरण सतगुरु,

आवागमन निवारे।।





पूज्य गुरुदेव
का
पावन परिचय



पूज्य गुरुदेव का पावन परिचय

परमसंत श्रीचन्द्रस्वामीजी का जन्म 5 मार्च, 1930 को अब पाकिस्तान में स्थित वर्तमान जिला उकाड़ा की तहसील दीपालपुर के गाँव भूमनशाह में हुआ था। अठारहवीं शताब्दी के परमसिद्ध बालयति उदासीन संत बाबा भूमनशाहदेव (1687-1747) के साथ इनका जन्म-जन्मान्तरों का बड़ा ही रहस्यमय, गहरा और अलौकिक सम्बन्ध है। पूज्य स्वामीजी के ही शब्दों में, "बाबाजी ही सब प्रकार से मेरे जीवन के आधार हैं। उनके बिना मेरा स्वतंत्र अस्तित्व ही नहीं है — ऐसा बोध उन्हीं की कृपा से मुझे सदैव

बना रहता है।" अपनी कठिन साधना, प्रयासों और सारी उपलब्धियों का पूर्ण श्रेय वे बाबाजी को ही देते हैं

वस्तुतः बाल्यकाल से ही वे सहज रूप से घटने वाले अत्युच्च आध्यात्मिक अनुभवों के बीच ही पले और बड़े हुये। बचपन से ही वे आध्यात्मिक रूप से परिपक्व आत्मा थे तथा उन्हें समाधि-चेतना का आभास था।

बाबाजी की प्रत्यक्ष प्रेरणा से जून, 1947 में भूमनशाह डेरे के तत्कालीन पूजनीय महंत गिरधारीदासजी ने स्वामीजी को मात्र सत्रह वर्ष की आयु में मंत्र प्रदान करके उदासीन पंथ में दीक्षित कर लिया था। यही था उनके जीवन का असली रूपान्तरण बिन्दु।

सन् 1947 में देश के दुःखद बँटवारे के कारण

स्वामीजी भूमनशाह डेरे के महन्त पूज्य गिरधारीदासजी व अन्य लोगों के साथ विभाजित भारत के सिरसा जिले में आ गये।

अपने छात्र जीवन में स्वामीजी असाधारण रूप से प्रतिभावान खिलाड़ी थे। वॉलीबाल उनका प्रिय खेल था। 22 वर्ष की आयु में (1952) जब वह देहरादून में एम.एस.सी. (पूर्वार्द्ध) गणित की पढ़ाई कर रहे थे तो उनमें वैराग्य का प्रबल आवेग उठा। उन्होंने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी तथा समस्त सांसारिक संबंधों का त्याग करके एकान्तिक साधु जीवन अपना लिया।

सन् 1953 में आपने श्रीचन्द्र-चिनार आश्रम, श्रीनगर (जम्मू-कश्मीर) के महान् संत श्रीकृष्णदासजी उदासीन से विधिवत् संन्यास-दीक्षा ग्रहण की।

इसके बाद आपने कुछ समय पैदल हिमालय भ्रमण किया। फिर आप श्रीनगर (काश्मीर) में चारों ओर हिमाच्छादित पर्वतों तथा दूर-दूर तक फैले सुन्दर झीलों के मध्य स्थित नितान्त एकान्त और सुन्दर स्थल हरि-पर्वत पर जा विराजे। यहीं से आपकी कठिन तपस्या-साधना का आरम्भ हुआ। सर्दियों में आप पहाड़ से नीचे उतर कर जम्मू में तवी नदी के तट पर स्थित एक एकान्त गुफा में आ जाते थे। इसी गुफा में आपको उदासीन पंथ के आदि ऋषियों, सनक, सनन्दन, सनातन व सनतकुमार बन्धुओं के दर्शन हुए।

सन् 1961 में आप प्रभु-प्रेरणा से श्रीनगर-काश्मीर से आकर हरिद्वार में सप्त-सरोवर से कुछ दूरी पर गंगाजी की कई धाराओं से घिरे एक वीरान और जंगली टापू में रहकर साधना करने लगे।

साधनाकाल में उन्हें उच्च से उच्चतर आध्यात्मिक अनुभूतियाँ होती रहीं। अन्ततः श्रीहरि की अनन्त कृपा से उन्होंने मात्र 35 वर्ष की अल्पायु में अपना असली गन्तव्य पा लिया। परब्रह्म के विरोधाभासी प्रतीत होने वाले विभिन्न आयाम उनके लिये सहज रूप से समन्वित हो गये, माया का सम्मोहन सदा-सदा के लिये टूट गया और परम सत्य का यह समग्र अनुभव उनके अस्तित्व में सदा-सदा के लिए आत्मसात् होकर स्थायी हो गया। तभी से निरन्तर श्रीभगवान् में स्थित, पूर्णतया भगवदेच्छा द्वारा ही संचालित होकर वे दिव्य अन्तर्प्रेरणा (intuition) से हमें अपनी दिव्य-लीला का रसा-स्वादन करा रहे हैं।

कोई नौ वर्ष गंगाजी के तट पर इस जंगली टापू में पूर्ण एकान्तवास करने के बाद सन् 1970

में सेवकों के अनुरोध पर आप सप्त-सरोवर, हरिद्वार में सेवकों द्वारा आपके लिये बनाए गये एक छोटे से आवास 'सेवक-निवास' (सीकर्स ट्रस्ट द्वारा स्थापित) में आ विराजे।

आपके अरण्यवास तथा सेवक-निवास में रहने की अवधि में देश और विदेशों से सच्चे अध्यात्म प्रेमियों का खिंच कर आपके पास आना जारी रहा। आपके भक्तगण आपको अपने माता-पिता से भी अधिक हितैषी और सुहृद समझते हैं।

समय के साथ-साथ, किसी समय शांत सप्त-सरोवर, हरिद्वार में यात्रियों की बहुत भीड़ और व्यवसायीकरण होने लगा। इस कारण वह स्थान स्वामीजी के पास आने वाले साधकों की साधना के अनुकूल नहीं रहा। अतः सन् 1990 में स्वामीजी की

ही प्रेरणा और देख-रेख में सीकर्स ट्रस्ट ने सप्त-सरोवर स्थित सेवक-निवास को बेच कर जिला देहरादून में पवित्र यमुनाजी के तट पर तीन ओर से हिमालय श्रृंखलाओं से घिरे एक छोटे से एकान्त और सुरम्य स्थल, डुमेट-बाड़वाला गाँव में, साधना केन्द्र आश्रम बनवाया। यहाँ पूरे वर्ष प्रतिदिन चार बार साधना के सत्र होते हैं जिसमें सभी आश्रम निवासियों के अतिरिक्त पूज्य गुरुदेव स्वयं भी भाग लेते हैं। यह दैनिक साधना-सत्र सन् 1990 से ही आश्रम में नियमित रूप से चल रहे हैं। इन साधना-सत्रों में बिना किसी प्रचार-प्रसार के पूज्य स्वामीजी के अलौकिक संरक्षण तथा मार्गदर्शन में भारत से तथा विश्व के 30-40 देशों से बिना किसी भेद-भाव के सभी मतों, धर्मों और वर्गों के सैंकड़ों साधक,

भजन-साधन करके प्रभु-प्राप्ति के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं।

साधना केन्द्र आश्रम द्वारा आश्रम परिसर में ही एक निःशुल्क विद्यालय व एक डिस्पैंसरी का भी संचालन किया जा रहा है तथा जनहित के अन्य अनेक सेवाकार्य भी किये जा रहे हैं।

स्वामीजी अपने विदेशी शिष्यों के बहुत अनुरोध पर अनेक बार विदेशों में भी थोड़े-थोड़े समय के लिए गये हैं तथा उन्होंने 15-20 देशों की यात्रा की है। वहाँ इनकी दिव्य, सौम्य और भव्य मूर्ति ने अगणित लोगों को एक सच्चे संत और समर्थ सद्गुरु के रूप में प्रभावित किया है।

कुछ वर्षों पहले न्यूयार्क, अमरीका से छपने

वाली प्रख्यात पत्रिका 'लाइफ' ने सभी देशों और धर्मों के आध्यात्मिक महापुरुषों का सर्वेक्षण किया था। इसके परिणामस्वरूप पत्रिका के दिसम्बर, 1991 के अंक में 'Men of God' शीर्षक से विश्व के प्रमुख संतों तथा धर्मगुरुओं का परिचय प्रकाशित किया गया था। इस परिचय में तिब्बती धर्मगुरु पूज्य दलाईलामा, पूज्य पोप जॉन पॉल द्वितीय तथा इजिप्ट, जापान, नार्वे, इंग्लैंड व इज़राइल के अन्य धर्मगुरुओं के साथ-साथ हिन्दू धर्म के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि तथा सच्चे आध्यात्मिक महापुरुष के रूप में पूज्य स्वामीजी की भव्य तस्वीर छापी गयी थी।

पूज्य स्वामीजी का व्यक्तित्व अत्यन्त भव्य और छवि अति मनोरम है। उनके अपार्थिव सौन्दर्य और अनन्त गुणों का वर्णन कैसे करें? उनके दर्शन मात्र

से ही व्यक्ति आस्तिक हो जाते हैं। उनका दिव्य आकर्षण सदा ही नित-नूतन बना रहता है।

उनका व्यवहार और बाह्य चेष्टाएं बड़ी ही संतुलित, मर्यादित, सुरुचिपूर्ण और संगीतमय हैं। वे परम क्षमाशील, दयावान और बालवत् सरल हैं। वह अपने भक्तों के साथ ही नियमित रूप से व्यायाम करते तथा भोजन आदि करते हैं। उनकी दैनिक-चर्या, खान-पान, निद्रा, आहार-विहार—सभी कुछ संतुलित और सम्यक् है।

दिनाँक 15 अक्टूबर, 1984 को साक्षात् भगवत्प्रेरणा से वे अनिश्चित काल के लिए पूर्ण मौन हो गये थे और तब से ही उनका रहस्यमय, अखण्ड व मधुर मौन जारी है। इस मौन की अवधि में वे प्रतिदिन दोपहर को भक्तों का आध्यात्मिक शंकानिवारण

लिखकर करते हैं। उनकी लेखनी, सटीक, पैनी, सारगर्भित, संक्षिप्त, सरल, संतुलित और बड़ी ही प्रभावशाली होती है।

अध्यात्म जैसे गूढ़ और असीमित विषय के तो आप सहज सम्राट हैं। साधनाकाल की सभी बारीकियों से आप स्वानुभव द्वारा पूर्ण परिचित हैं। सभी प्रमुख साधन-ध्यान विधियों का आपको अधिकारपूर्ण ज्ञान है। आप एक सच्चे सद्गुरु की तरह व्यक्तिगत स्तर पर प्रत्येक साधक की भिन्न-भिन्न प्रकार से सहायता व मार्गदर्शन करते हैं।

अध्यात्म में आप अद्भुत रूप से समन्वयस्वरूप हैं। आपके करुणा मिश्रित संतुलित और वैज्ञानिक जीवन-दर्शन के कारण सभी भारतीय व विदेशी साधक सदा ही आप पर मुग्ध रहते हैं। निश्चय ही

आप पूर्व और पश्चिम का सर्वोत्तम संगम हैं। पूज्य गुरुदेव के दिव्य प्रभाव के कारण ही आज यूरोप समेत विश्व के अनेक देशों में बाबा भूमनशाहजी का दिव्य नाम पहुँच गया है तथा साधना केन्द्र आश्रम में विदेशी भक्त भी बाबा श्रीचन्द्रजी तथा बाबा भूमनशाहजी के तैलचित्रों (paintings) के सामने प्रेम-श्रद्धा से प्रणाम करते हैं।

बाबा भूमनशाहदेव आप्तकाम व आत्मतृप्त संत थें। उन्होंने जगत को अपने सदुपदेश किसी ग्रंथ के रूप में तो नहीं दिये किन्तु स्वयं के आदर्श जीवन द्वारा असीम करुणा और प्रेम से जन-जन का पथ-प्रदर्शन किया।

पूज्य गुरुदेव ने इसी पुस्तिका में लिखा है, "इन उपदेशों में शब्द मेरे हैं परन्तु उपदेश पूर्णतया बाबाजी

के ही हैं जो उनके भगवद्मय जीवन के सर्वथा अनुरूप हैं। यह बात मैं बाबाजी के संग, उनकी छत्र-छाया में तथा उनके वरद हस्त के नीचे अनेक जन्मों में की गई अपनी आध्यात्मिक साधना और उपलब्धि के आधार पर विनम्रतापूर्वक कहने का साहस कर रहा हूँ।" पूज्य गुरुदेव के इन रोमांचकारी व दिव्य शब्दों से स्पष्ट है कि जिस प्रकार श्रीगुरु अर्जुनदेवजी ने अपनी समाधिजन्य चेतना से अनेक वर्षों बाद अपने से पूर्व गुरुओं की वाणी का संकलन किया था उसी प्रकार गुरु महाराजजी ने भी अपनी दिव्य दृष्टि से बाबाजी के पूरे जीवनदर्शन एवं सदुपदेशों को मात्र पच्चीस सूत्रों में व्यक्त करके अथाह और सच्चे आध्यात्मिक व व्यावहारिक ज्ञान का घनीभूत खजाना हमें दे दिया है।

आज आनंद-दर्पण पुस्तिका के रूप में बाबाजी के सदुपदेशों के द्वितीय संस्करण को प्रकाशित करते हुए हमें बहुत हर्ष हो रहा है। अब बाबाजी हम सब पर ऐसी कृपा करें कि हम उनकी पावन वाणी को अपने जीवन में उतार सकें तथा आत्मसात् कर सकें।

7 जुलाई, 2009
गुरुपूर्णिमा

सेवक
स्वामी प्रेम विवेकानंद

बाबा भूमनशाहजी
का
पावन परिचय



बाबा भूमनशाहजी का पावन परिचय

सभी मनुष्य ऐसा आनन्द चाहते हैं जो कभी कोई उनसे छीन न सके, जो सदा-सर्वदा उनके पास बना रहे, जिसमें कभी कमी अथवा व्यतिक्रम न हो, जो असीम और निर्बाध हो। चाहे कोई राजा हो या रंक, बालक हो या बूढ़ा, विद्वान हो या अनपढ़, सभी मनुष्य इस चाह को लेकर ही प्रवृत्त होते हैं। आनन्द की यह चाह न तो संस्कारजन्य है और न ही शिक्षा का इससे कोई संबंध है। यह किसी जाति, धर्म, देश अथवा राष्ट्र से भी परिसीमित नहीं है। यह चाह निर्विवाद रूप से सार्वभौमिक है।

वस्तुतः इसे चाह कहना भी उचित नहीं है। यह तो उस अन्तरात्मा की पुकार है जो मानो अपने उद्गम परमात्मा से बिछुड़ गई हो तथा उसी में लौट जाना चाहती हो। आप हजार प्रयास कर लें, पर न तो आप इस पुकार का दमन कर सकते हैं और न ही हनन। जगत के मोह से उत्पन्न संकल्पों और वासनाओं के कोलाहल में यह पुकार किसी को सुनाई भले ही न दे, पर जब भी कोई थोड़ी देर रुक कर अपने अन्दर देखता है तो उसे अपनी अन्तरात्मा की यह पुकार अवश्य सुनाई देती है। यह पुकार तभी बन्द होती है जब मनुष्य की अन्तरात्मा अपने विशुद्ध, देश-कालातीत अनन्त सत्स्वरूप को पा लेती है।

आप्तकाम, परमात्मा के प्रेम-ज्ञान से परिपूर्ण संतों और महर्षियों के अतिरिक्त कोई भी मनुष्य

अपने हृदय पर हाथ रख कर यह दावा नहीं कर सकता है कि वह हर प्रकार से संतुष्ट और तृप्त है। मनुष्य मात्र की अन्तरात्मा की यह सार्वभौमिक पुकार, भगवद्-उपलब्ध संत तथा सत्शास्त्र इस बात का प्रमाण हैं कि ऐसा शाश्वत और देश-काल-वस्तु अपरिछिन्न आनन्द तत्त्व अवश्य है जिसे मनुष्य उपलब्ध हो सकता है। परन्तु चीनी का मीठा होने का प्रमाण स्वयं चीनी को चख कर देखना ही है। इसी लिये परब्रह्म सच्चिदानन्द परमात्मा को "स्वयं संवेद्य" कहा जाता है। परमात्मा को स्वयं अनुभव करना (self verification) ही उसके अस्तित्व का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मनुष्य जीवन के सच्चे साध्य तथा उस साध्य की प्राप्ति के सम्यक् साधनों को शिरोमणि संत बाबा भूमनशाहजी के सूत्ररूपी आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक

सदुपदेशों को इस छोटी सी पुस्तिका में प्रस्तुत किया गया है जो गागर में सागर भरने जैसा ही प्रयास है। इन उपदेशों में शब्द मेरे हैं परन्तु उपदेश पूर्णतया बाबाजी के ही हैं जो उनके भगवन्मय जीवन के सर्वथा अनुरूप हैं। यह बात मैं बाबाजी के संग उनकी छत्र-छाया में तथा उनके वरदहस्त के नीचे अनेक जन्मों में की गई अपनी आध्यात्मिक साधना और उपलब्धि के आधार पर विनम्रतापूर्वक कहने का साहस कर रहा हूँ। यदि समुचित और उपयुक्त शब्दों में मैं बाबाजी के उपदेशों को अभिव्यक्त नहीं कर पाया तो इसमें मेरी ही असमर्थता का दोष है जो पाठकगण कृपया क्षमा करेंगे।

बाबाजी के उपदेशों के इन सारभूत वाक्यों को आप अपने पूर्व निर्मित विश्वासों (ready - made

beliefs) और धारणाओं तथा पूर्वाग्रहों को छोड़कर, शांतचित्त होकर निष्पक्ष भाव से पढ़ेंगे और मनन करेंगे तो बाबाजी के संबंध में उनकी अलौकिक शक्ति एवं भगवद्ज्ञान व प्रेमपूर्ण आध्यात्मिक छवि का दिग्दर्शन आपको जरूर होगा। तो भी यहाँ उनके जीवन का संक्षिप्त परिचय देना प्रासंगिक ही है। बाबाजी के कई सेवकों ने उनकी जीवनी सुन-सुना कर बड़ी-बड़ी पुस्तकों के रूप में भी लिखी हैं परन्तु वे पुस्तकें जनसाधारण को उपलब्ध नहीं हैं। भौतिकवाद के इस युग में सभी ओर येन केन प्रकारेण धन एकत्रित करने की दौड़ चल रही है जिसमें कोई भी दूसरे नम्बर पर नहीं रहना चाहता। मनुष्य जीवन की गति इतनी तेज हो गई है कि उसे एक क्षण भी रुक कर यह सोचने का समय नहीं मिलता कि वह कौन है, कहाँ से आया

और उसे कहाँ जाना है। ऐसे में बहुत बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढ़ने का मनुष्य को अवकाश ही कहाँ है? अतः मुझे आशा है कि इस छोटी सी पुस्तिका से बाबा भूमनशाहजी के प्रबुद्ध जीवन एवं आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक सदुपदेशों से जनसाधारण तथा साधकों को सत्प्रेरणा मिलेगी जिससे वे अपने जीवन को सार्थक और सफल बना सकेंगे।

प्रातः स्मरणीय बालयति बाबा भूमनशाहजी अठारहवीं शताब्दी के उन महान् संतों में हुए हैं जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन परमात्मा के सतत् स्मरण, दीन-दुखियों की सेवा करने तथा मोह-मया में सोये लोगों को जगा कर उन्हें प्रभु-स्मरण में लगाने हेतु ही समर्पित किया। "पद्म पत्रमिवाम्भसा" के भगवद्गीता के कथनानुसार वे जगत् में जल में कमलपत्र की भँति

रहे। बाबाजी के पिता श्रीहस्सारामजी पंधु तथा उनकी माता श्रीमती राजोबाई दोनों ईश्वर के परम भक्त थे और उदासीनाचार्य बालयति बाबा श्रीचन्द्रजी, सुपुत्र गुरु नानकदेवजी महाराज, में अनन्य श्रद्धा तथा निष्ठा रखते थे। वे गाँव बहलोलपुर, तहसील दीपालपुर, वर्तमान जिला-उकाड़ा, पंजाब (अब पाकिस्तान) में रहते थे और खेती-बाड़ी का काम करके संतोषपूर्वक जीवननिर्वाह करते हुए अपना अधिकांश समय ईश्वर की आराधना में ही व्यतीत करते थे। उनका जीवन एक आदर्श गृहस्थ-जीवन था। उनका तन जगत् में पर मन सदा प्रभु-स्मरण में ही लगा रहता।

चिरकाल तक उन के घर कोई संतान नहीं हुई थी। प्रौढ़ अवस्था में पहुँचने पर सन् 1687 वैशाख मास की द्वितीया को श्रीहस्सारामजी और उनकी

धर्मपत्नी श्रीमति राजोबाई के घर एक बड़े सुन्दर, सौम्य और शांत बालक ने जन्म लिया। इस दिव्य बालक के जन्म से 11 दिन पूर्व से ही प्रत्येक रात्रि को माता राजोबाई को स्वप्न में बालयति बाबा श्रीचन्द्रजी के दर्शन होते और वह दिन-रात बाबा श्रीचन्द्रजी के दर्शनों की मधुर-स्मृति में आनन्द विभोर रहतीं। प्रसव के समय भी माँ को पीड़ा का कोई अनुभव नहीं हुआ। माता-पिता का यह सुदृढ़ विश्वास था कि बाबा श्रीचन्द्रजी ने ही प्रसन्न होकर उनके घर में अवतार लिया है। बालक का नाम उन्होंने भूमिया रखा। यही दिव्य बालक बाद में बालयति बाबा भूमनशाहजी के पावन नाम से प्रसिद्ध हुआ। बालक के मुख-मण्डल पर इतना तेज और दिव्य आकर्षण था कि जो भी उसे एक बार देख लेता वह बार-बार आकर्षित होकर उसे

देखने आता। शीघ्र ही आस-पड़ोस में इस बात की चर्चा फैल गई और चौधरी हस्साराम के घर उस बालक के दर्शनों के लिये लोगों की भीड़ लगने लगी। पिता श्रीहस्सारामजी तथा माता श्रीमति राजोबाई भी सबका यथायोग्य प्रेमपूर्वक स्वागत करते। उनका घर, आँगन, तन-मन सब एक दिव्य आनन्द से सराबोर हो उठे; उनके घर, उनके जीवन में मानो स्वर्ग उतर आया।

बालक जैसे-जैसे बड़ा हुआ तो उसमें सहज रूप से अलौकिक शक्तियों का आविर्भाव होने लगा। अनेक बार काले नागों को बालक से लिपटे और उसके साथ खेलते देखा गया। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि उदासीन मत में बाबा श्रीचन्द्रजी को भगवान् शंकर का अवतार माना जाता है और उनके पिता श्रीगुरु नानकदेवजी को भगवान् विष्णु का अवतार। पुराणों के अुनसार

भगवान् विष्णु को शेषशय्या (शेष नाग की शय्या) पर विराजमान दिखाया गया है तथा भगवान् शंकर के गले और भुजाओं में प्रेम से लिपटे नागों-सर्पों को चित्रित किया गया है। इस संदर्भ में देखें तो भूमिया बालक के साथ नागों का प्रेम से खेलना सहज ही समझ में आ जाता है। सनातन धर्म में भगवान् विष्णु और भगवान् शंकर में तत्त्वतः भेद नहीं माना जाता। उसीके अनुसार उदासीन मत में श्री गुरुनानकदेवजी तथा बाबा श्रीचन्द्रजी को एक रूप मान कर ही उनकी पूजा-स्तुति की जाती है। बाबा श्रीचन्द्रजी के मंदिरों में आरती के साथ प्रायः नीचे लिखा श्लोक भी पढ़ा जाता है:

विष्णु रूप नानक गुरु, शिव स्वरूप श्रीचन्द्र।
एक रूप कर जो भजे, पावे परमानन्द।।

भूमिया बालक के माता एवं पिता का यह विश्वास कि उनके घर बाबा श्रीचन्द्रजी ने ही अवतार लिया है, मात्र विश्वास ही नहीं अपितु एक तथ्य भी सिद्ध हुआ जब धीरे-धीरे बालक भूमिया में बाबा श्रीचन्द्रजी की अलौकिक शक्तियाँ और प्रभु-ज्ञान तथा प्रेम प्रकट होने लगे। भूमिया बालक की जीवनशैली पूर्णतया बाबा श्रीचन्द्रजी की ही भाँति बनती जा रही थी। वह बालक प्रायः अन्तर्मुख होकर ध्यान में मग्न रहता। अनेक प्रकार के चमत्कार भी भूमिया द्वारा सहज रूप से घटने लगे। इन सभी अलौकिक घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन करना यहाँ छोटी सी पुस्तिका में न तो संभव ही है और न ही ऐसा उद्देश्य है। फिर भी दो-तीन चमत्कारी घटनाओं को बताए बिना उनका संक्षिप्त परिचय भी नहीं दिया जा सकता। अतः उन्हें लिखना तो अनिवार्य ही है।

बालक भूमिया जब थोड़ा बड़ा हुआ तो वह अपने माता-पिता की प्रेमपूर्वक सेवा करता, खेती-बाड़ी में उनका हाथ बँटाता तथा कभी भगवान् कृष्ण की तरह अन्य बालकों के साथ वन में गायों को भी चराने ले जाता। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी वह अधिकांश समय किसी वृक्ष के नीचे बैठ कर ध्यान-स्मरण में ही व्यतीत करता। खेती-बाड़ी का काम करते समय जब कभी उसे सिर पर मिट्टी का तसला उठाना पड़ता तो वह यह काम बड़ी प्रसन्नता से करता, परन्तु परम आश्चर्य की बात, जो उसके घर वाले और गाँव के अनेक लोग देखते, वह यह थी कि मिट्टी या बोझे का तसला उनके सिर के साथ न छू कर जैसे हवा में तैरता हुआ उनके सिर से 2-3 इंच ऊपर उठा रहता और उनके साथ-साथ चलता। बड़ी

दूर-दूर से लोग भगवान् की इस विचित्र लीला और भूमिया की विभूति को देखने आते और चकित रह जाते तथा भूमिया को जन्म-सिद्ध योगी मानकर उसके सामने माथा टेकते और आदर देते। भूमिया नम्रतापूर्वक यही कहते, "यह तो परमकर्ता भगवान् की शक्ति से सहज रूप से होता है, मैं स्वयं कुछ करने-कराने वाला नहीं हूँ।" उसी समय से भूमिया की ख्याति उस पूरे क्षेत्र में फैल गई। भूमिया बालक के सिर पर तसला न छू कर ऊपर आकाश में चलने की घटना तर्कवादियों (rationalists) को बड़ी अंधविश्वासपूर्ण (superstitious) लगती होगी परन्तु सर्वशक्तिमान परमेश्वर कभी-कभी अपने ही प्रकृति के बनाए नियमों के ऊपर से (transcendently) भी भक्त के जीवन में हस्तक्षेप करते हैं। भक्त प्रहलाद को आग से तपे हुए लोहे के

खम्बे के साथ बाँधने से वह खम्बा ठण्डा हो जाता है। प्रहलाद को पहाड़ की चोटी से नीचे खड्ड में गिराने से उसको खरोंच तक नहीं आती। सभी धर्मों के शास्त्रों में ऐसी चमत्कारी घटनाओं का उल्लेख मिलता है। बाबा भूमनशाहजी की अलौकिक शक्तियों को उनकी कृपा से मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है। मेरी स्वयं की साधना काल की अनेक भयावह घटनाओं में बाबाजी ने इस शरीर की रक्षा की और प्रत्येक पग पर वे मेरा पथ-प्रदर्शन और सहायता करते रहे। बाबाजी के विभूतियों से सम्पन्न होने का इससे अधिक बड़ा प्रमाण मेरे लिए भला और क्या हो सकता है? बाबाजी के प्रति तब मेरा निरन्तर भाव यही रहता—

"मैं तेरा, दरिया तेरा, किश्ती तेरी, साहिल तेरा।"

शुद्ध आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भूमिया के सिर पर मिट्टी से भरा बोझल तसला न छूने का अर्थ यह भी लगाया जा सकता है कि भूमिया किशोर अवस्था में ही उस पूर्ण आध्यात्मिक स्थिति को उपलब्ध हो चुका था जहाँ ब्रह्मविद् को जगत् एक बोझा प्रतीत न होकर सबमें परमात्मा का रूप ही दिखाई देता है तथा जगत् का कोई भी दुःख-सुख उसे छू तक नहीं पाता। दूसरा संकेत इस घटना से गीता और गुरुबाणी के अनुसार यह भी मिलता है कि अनन्य भक्त का सब प्रकार का बोझा भगवान् स्वयं वहन करते हैं। महान् पुरुषों और अवतारों के जीवन की प्रत्येक घटना में निःसन्देह कोई आध्यात्मिक रहस्य अवश्य जुड़ा होता है।

भूमिया की किशोर अवस्था होने पर उसके पिता हस्साराम बहलोलपुर गाँव में अपनी जमीन बेचकर

दीपालपुर चले गये और वहाँ मकान बनाकर रहने लगे। पास में जमीन ठेके पर लेकर उन्होंने अपना खेती-बाड़ी का काम वहाँ भी जारी रखा। इधर भूमिया को उन्होंने एक पण्डितजी के पास पढ़ने के लिये भेजना शुरु कर दिया। भूमिया पण्डितजी से परमात्मा के बारे में ऐसे-ऐसे प्रश्न करता कि पण्डितजी असमञ्जस में पड़ जाते और निरुत्तर हो जाते। परमात्मा के विषय में भूमिया के बोधजन्य असाधारण ज्ञान तथा प्रेम को देखकर पण्डितजी को यह विश्वास हो गया कि यह बालक कोई साधारण जीव नहीं है। भूमिया भी पढ़ाई की ओर अधिक ध्यान न देकर अन्तर्मुख होकर अपना अधिकांश समय भगवत्स्मरण में ही व्यतीत करता। धर्म और अध्यात्म के संबंध में इस किशोर बालक का अद्भुत ज्ञान-प्रेम देख-सुन कर सब लोग चकित रह

जाते। दूर-दूर तक चारों ओर सभी गाँवों में यह चर्चा होने लगी कि किशोर भूमिया जन्म से ही सिद्ध महान् आत्मा है। लोग उनके पास उनके दर्शन करने व धर्म-परमात्मा के संबंध में अनेकानेक जिज्ञासायें लेकर आते और पूर्ण सन्तुष्ट होकर लौटते। भूमिया के माता-पिता का सम्मान भी खूब बढ़ा। श्रीहस्सारामजी भी प्रसन्न होकर सभी दर्शनार्थियों एवं धर्मप्रेमियों को भोजन कराते तथा उनकी सेवा करते। इस प्रकार भूमिया की दिव्य अलौकिक लीला का आस्वादन करते-करते समय बड़ी शीघ्रता से बीतने लगा।

अभी भूमिया की आयु कोई 13 वर्ष के करीब होगी जब उन दिनों दसवीं गद्दी के श्रीगुरु गोविन्दसिंहजी यात्रा करते हुए अपने सेवकों के साथ दीपालपुर के पास से निकले। भूमिया उनके चरणों में उपस्थित हुए

और उनसे स्वयं को मंत्रदीक्षा देने की प्रार्थना की। श्रीगुरु गोविन्दसिंहजी ने उन्हें आशीर्वाद दिया परन्तु कहा कि आपके गुरुदेव उदासीन परमसंत बाबा प्रीतमदासजी नगर पाकपटन में, जो वहाँ से 30 किलोमीटर के करीब होगा, अपने डेरे में विराजमान हैं। आप उनसे जाकर गुरुमंत्र लें। वे तुरन्त आपको पहचान जायेंगे व गुरुमंत्र देकर साधु बना देंगे। उदासीनाचार्य बाबा श्रीचन्द्रजी का यश आपसे फैलेगा। यह कह कर श्रीगुरु गोविन्दसिंहजी अपने शिविर के साथ आगे यात्रा पर निकल गये।

भूमिया के मन में साधु बनने की अभीप्सा दिन प्रतिदिन बढ़ती गई और अन्ततः उसने अपने माता-पिता को सब बात बताकर उनसे इस बारे में आज्ञा माँगी। उनके माता-पिता तो बाबा श्रीचन्द्रजी के अनन्य भक्त

थे ही। उनके हृदय में भी बाबा श्रीचन्द्रजी की प्रेरणा हुई और कुछ आरम्भिक संकोच के बाद उन्होंने भूमिया की बात मान कर उनको पाकपटन के लिये विदा किया। पाकपटन में बाबा प्रीतमदासजी के डेरे पर पहुँचकर भूमिया ने उनके चरणों में शीश झुकाया तो बाबाजी ने उन्हें उठाकर अपने गले लगा लिया और कहा, "मैं सब जानता हूँ आप तो स्वयं बाबा श्रीचन्द्रजी, मेरे आराध्य के साक्षात् अवतार हैं परन्तु शास्त्र की मर्यादा को पूरा करने और मुझे कृतार्थ करने के लिये आप यहाँ आए हैं।" उन्होंने भूमिया की इच्छा अनुसार उनको गुरुमंत्र देकर उदासीन मत में दीक्षित कर लिया और भूमिया नाम बदलकर बाबा भूमनशाह रख दिया। उसके बाद से वे बाबा भूमनशाह के नाम से ही प्रसिद्ध हुए। 'भूमनशाह' शब्द 'भूमा'

शब्द से बना है जो उपनिषद् में आया है तथा जिसका अर्थ है 'अनन्त'।

यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमास्ति
भूमैव सुखं भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति।

– छांदोग्य उपनिषद् 7.23.1

अर्थात, "निश्चय ही जो भूमा अर्थात अनन्त है वही सुख है, अल्प में सुख नहीं है। सुख भूमा ही है। भूमा की ही विशेष रूप से जिज्ञासा करनी चाहिये।"

कुछ समय अपने गुरुदेव के चरणों में रहने के पश्चात् बाबा भूमनशाहजी गाँव कुतुबकोट के पास आकर जंगल में एक कुएँ के पास धूना लगाकर रहने लगे। इस क्षेत्र में उनका सुयश और सुकीर्ति तो पहले ही चारों ओर फैल चुकी थी। फलतः बाबाजी के पास सब धर्मों के लोग — हिन्दू, सिख और मुसलमान —

विशेषकर अपनी-अपनी मुरादें और जिज्ञासाएँ लेकर पहुँचने लगे। हर समय उनको साधक और सेवक घेरे रहते। सभी की मुरादें पूरी होती। बाबाजी के भगवद्भाव में पूर्णतया डूबे व्यक्तित्व में अत्यन्त प्रबल आकर्षण था। अधिकांश लोग तो उनके दर्शन करके ही तृप्त हो जाते थे। जो भी वहाँ उनके पास आता, जिसकी जितनी झोली होती, अपनी भावना के अनुसार उसे भर कर ही लौटता। बाबाजी तो अहैतुकी करुणा और दया के अथाह सागर थे। सागर में कितनी भी नदियाँ आकर गिरें अथवा कितनी भी निकल जाएँ तो भी वह वैसे का वैसा असीम और अक्षय बना रहता है। यही तो ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष की स्थिति शास्त्रों में वर्णित है। सुखमणी साहिब में और गीताजी में स्थितप्रज्ञ महान् संत के लक्षण जो बताए गये हैं वे सब बाबाजी में

सर्वभावेन विद्यमान थे। पातंजलि योग सूत्र में जिन-जिन असाधारण शक्तियों और विभूतियों का उल्लेख है वे सब भी बाबा भूमनशाहजी में प्रकट थीं। कभी-कभी उन्होंने लोगों में परमात्मा के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने के लिये उन विभूतियों का प्रयोग भी किया पर उनका प्रदर्शन वे स्वकीर्ति अथवा आर्थिक तथा भौतिक लाभ के लिये कभी नहीं करते थे। वे बड़े ही सरल, सौम्य (unassuming) और शांत स्वभाव के थे।

कुतुबकोट गाँव एक मुसलमान पठान की जागीर थी। वहाँ अधिकांश मुसलमान ही बसे हुए थे। उन दिनों हिन्दू, मुसलमान व सिख आपस में प्रेमभाव से रहते थे। खासकर गाँव के लोग तो बिल्कुल भाईयों की तरह प्रेम से रहते। जो झगड़े लोगों में होते वह धन-सम्पत्ति को लेकर होते; काम, क्रोध, लोभ, मोह के

कारण होते, परन्तु धर्म के नाम पर सामान्यजन (masses) में कभी विद्वेष की भावना के कारण झगड़े कदाचित् ही होते थे। इस संदर्भ में आमतौर पर जनसाधारण में सामञ्जस्य बना हुआ था। मस्त मुसलमान सूफी फकीरों के पास हिन्दू-सिख जाते तो भगवान् के प्रेम के रस में डूबे हिन्दू-सिख संतों के दर्शनों को हजारों मुसलमान भी आते। बाबा भूमनशाहजी ऐसे ही भगवद्भक्ति के रस और ज्ञान में डूबे संतों में से थे अतः सभी धर्मानुयायी साधक और जिज्ञासु उनके पास आते थे।

कुतुबकोट गाँव के मुसलमान जागीरदार लक्खा वट्टू को किसी बड़े अपराध में लाहौर के सूबेदार ने लाहौर जेल में बंद कर रखा था। बाबाजी का यश सुन कर लक्खे वट्टू की माँ, जिसका नाम बख़्तावर था,

अपने रिश्तेदारों को साथ लेकर बाबाजी के पास गई और रोई, विलाप किया तथा उनसे प्रार्थना की कि आप समर्थ, पहुँचे हुए साधु हैं आप अपनी शक्ति से मेरे पुत्र लक्खा वट्टू को किसी प्रकार भी लाहौर की जेल से छुड़वाएँ। इस पर बाबाजी हँसने लगे और फिर कहा — "जहाँ पर कुतुबकोट गाँव बसा है वह मेरे पिछले जन्म की तपोभूमि है। आपके लड़के को तो मैं छुड़वा दूँगा परन्तु यह कुतुबकोट गाँव आप लोगों को छोड़कर दूसरी जगह बसना पड़ेगा तथा मेरे पूर्वजन्म की तपोभूमि पर पहले की ही तरह लंगर चलेगा और संत तथा साधक-जन वहाँ तप तथा साधना करेंगे।" बख़्तावर तो अपने पुत्र के वियोग में बहुत बेचैन थी। उसने तुरन्त कहा, "महाराज, मेरा पुत्र यदि जेल से छूटकर घर सुरक्षित आ जाए तो जैसा आप कहेंगे हम

उसी प्रकार आज्ञा का पालन करेंगे।" सर्वशक्तिमान परमात्मा की लीला अपरम्पार है। चौथे दिन ही लक्खा वट्टू लाहौर जेल से छूट कर घर वापस आ गया। अपने पुत्र को पाकर उसकी माँ बख़्तावर की प्रसन्नता का तो कोई पारावार न रहा। उसने मन ही मन बाबाजी को बार-बार प्रणाम किया। उसके पुत्र ने जो बहुत ही हतप्रभ लग रहा था, अपनी माँ और रिश्तेदारों को बताया, "एक साधु फ़क़ीर, जिसके मुखमण्डल पर अपूर्व शांति और दिव्य तेज था, रात को उस जेल के कमरे में प्रकट हुआ। उसके कमरे में आते ही कमरा मन्द-मन्द प्रकाश से जगमगा उठा। पहले तो मैं डर-सा गया परन्तु फ़क़ीर साधु ने बड़े प्रेम और करुणा भरे शब्दों में कहा —'डरो मत, मैं तुम्हें लेने आया हूँ; तुम्हारी माँ बड़ी परेशान है।' फिर बाबाजी

ने मेरे पाँव की बेड़ियाँ खोल दी और कहा — 'मेरे पीछे-पीछे चले आओ।' मैं उनके कहने के अनुसार उनके पीछे-पीछे चलने लगा। वे बंद कमरे की दीवार से बाहर निकल गये; मैं भी उनके चारों ओर फैले प्रकाश में उनके पीछे-पीछे चलता हुआ कमरे और जेल की चारदीवारी से बाहर आ गया और उनके साथ उसी प्रकाश में चल कर, हम दोनों कुछ ही क्षणों में कुतुबकोट गाँव के पास पता नहीं कैसे पहुँच गये। मुझे तो ऐसे लगा जैसे मैं कोई स्वप्न देख रहा हूँ। इतने में वह साधु तो गायब हो गया और मैं चल कर अपने घर आ गया हूँ।"

दूसरे दिन ही लक्खे की माँ अपने पुत्र को लेकर बाबा भूमनशाहजी के पास गई। वहाँ बाबाजी के अनेक सेवक भी उपस्थित थे। लक्खा ने बाबा

भूमनशाहजी को देखते ही एकदम पहचान लिया और उनके चरणों में गिर पड़ा। उसने सबको बताया कि यही बाबाजी मुझे जेल से छुड़ा कर लाये हैं। यह सुनकर वहाँ उपस्थित सभी लोग बाबाजी की जय-जयकार करने लगे। वहाँ का पूरा वातावरण श्रद्धा, उल्लास और परमात्मा के विश्वास से सुवासित हो उठा। एक-दो दिन में ही इस अलौकिक घटना की चर्चा चारों ओर सब गाँवों में फैल गई। दूर-दूर से लोग बाबाजी के पास दर्शन करने आने लगे और उनके चरणों में अपना शीश झुका कर उनकी आशीषें लेने लगे। उधर माँ बख़्तावार ने अपने कबीले के सब लोगों को इकट्ठा किया और उसने बाबाजी से कुतुबकोट गाँव को उन्हें देने की जो प्रतिज्ञा की थी, उसके संबंध में सभी को अवगत कराया। लक्खा वट्टू जो बाबाजी

की अलौकिक शक्ति को देखकर अत्यन्त प्रभावित व अभिभूत था उसने स्वयं पूरे कबीले को इस बात पर राज़ी कर लिया कि उन्हें अपना पूरा कुतुबकोट गाँव बाबाजी को भेंट कर देना चाहिये। बातचीत के दौरान ही किसी रिश्तेदार ने यह कहा कि हम सब बाबाजी के बड़े ऋणी हैं और बाबाजी में हमारा पूरा यकीन व ईमान कायम हो गया है तो भी जिस जगह बाबाजी ने अपने पूर्वजन्म में तप किया था तथा जहाँ वे लंगर चलाया करते थे, वह जगह तो हमें वह बताएं। वहाँ कोई निशान, कोई चिह्न तो अवश्य होना चाहिये। सब लोग सोच-विचार करने के बाद बाबाजी के पास गये और उन्होंने उनके सामने अपनी मंशा प्रकट की। इस पर बाबाजी ने मुस्कुराकर कुतुबकोट में एक विशेष स्थान को खोदने के लिये आज्ञा दी। उस स्थान को

खोदने पर बाबा भूमनशाहजी के पूर्वजन्म के धूने का स्थान मिला जहाँ उनका चिमटा व कमण्डल थे और उसके पास थोड़ी दूर खोदने पर लंगर के बड़े-बड़े देगचे, कड़ाहे और तवे मिले। यह सब देखकर पठान कबीले के सभी लोगों का यकीन और विश्वास और भी सुदृढ़ हो गया और वे सभी बाबाजी को मानने लगे तथा उनके सेवक बन गए। इस प्रकार पठान लोग वह गाँव बाबाजी को भेंट कर वहाँ से सात किलोमीटर दूर जाकर नया गाँव बसा कर रहने लगे। उस नए गाँव का नाम हवेली लक्खा पड़ा और गाँव 'कुतुबकोट' का नाम बदल कर धीरे-धीरे 'भूमनशाह' पड़ गया।

बाबा भूमनशाहजी अपने पूर्वजन्म के स्थान पर आ गये और वहाँ उन्होंने लंगर भी आरम्भ कर दिया। तब तक उन के हजारों सेवक बन चुके थे

जिनमें सभी जातियों और धर्मों के लोग थे। बाबाजी के अनेकानेक अनन्य भक्त और सेवक लंगर के लिये सभी आवश्यक सामग्री भेंट करते और तन-मन-धन से सेवा भी करते। बाबाजी उनको सदाचार और ईमानदारी का जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते और परमात्मा का सतत् स्मरण करने का उपदेश करते। बड़े-बड़े विद्वान, क़ाज़ी और पण्डित, उनके पास आकर परमात्मा के स्वरूप के बारे में प्रश्न करते और बाबाजी के शास्त्र-सम्मत और युक्तिसंगत उत्तरों को सुनकर चकित रह जाते। बाबाजी बड़े सरल शब्दों में सबका समाधान करते और अक्सर कहा करते—

"देने को अन्न दान, लेने को हरि नाम।"

जीवन की उच्चतम मानवीय एवं आध्यात्मिक मूल्यों को अपनाने की सत्प्रेरणा निरन्तर वे सरल भाषा में देते रहे जिसमें जात-पात व सम्प्रदाय आदि का तनिक भी आभास न होता। सबसे बड़ा उपदेश तो भगवन्मय और सेवामय उनका अपना स्वयं का आदर्श जीवन था। इसी कारण बाबाजी का डेरा खूब फला व फूला भी।

इस प्रकार एक सच्चे साधु का जीवन व्यतीत करते हुए वे विक्रमी संवत् 1804 के पौष मास की तेहरवीं तिथि को अपनी भौतिक देह का परित्याग कर आत्मस्वरूप परमात्मा की ज्योति में लीन हो गये। अपनी देह त्यागने के सात दिन पूर्व ही उन्होंने अपने सब सेवकों के सामने अपने मुख्य शिष्य बाबा निर्मलचन्दजी को अपने हाथों से तिलक लगाकर

अपना उत्तराधिकारी बना दिया था। कालान्तर में बाबा भूमनशाहजी की परम्परा में बाबा महन्त दर्शनदासजी तथा बाबा महन्त हरभजनदासजी बड़े ही प्रभावशाली संत हुए। महन्त दर्शनदासजी के दर्शन करके उस समय का अंग्रेज कमिश्नर इतना प्रभावित हुआ था कि उसने बाबा भूमनशाहजी के लंगर के लिये तीन हजार एकड़ कृषि भूमि उनके डेरे के नाम लगा दी थी। महन्त हरभजनदासजी ने डेरे में बड़े-बड़े भव्य भवनों का निर्माण करा कर डेरे व लंगर की उन्नति की। उन्होंने बाबा श्रीचन्द्रजी का मंदिर, बाबा भूमनशाहजी की मूलभूत समाधि और लंगर के लिये बड़े-बड़े भवन तथा भजन-साधन के लिये एक भजन-महल नाम का बड़ा भवन भी बनवाया।

भारत के विभाजन से पूर्व अर्थात अगस्त 1947 से पूर्व भूमनशाह डेरे में प्रतिवर्ष चार उत्सव बड़े श्रद्धा व उल्लास से मनाए जाते थे। पहला बाबा भूमनशाहजी का निर्वाण दिवस जिसे तेहरवां कहा जाता था। दूसरा श्रीचन्द्र नवमी अर्थात बाबा श्रीचन्द्रजी का जन्मदिवस जिस पर सैंकड़ों संतों, सेवकों और जनता-जनार्दन को अनेकानेक प्रकार के व्यंजन तथा मिष्ठान सहित स्वादिष्ट भोजन कराया जाता था। तीसरा वैशाखी व चौथा मांघी भी बड़े उत्साह से मनाई जाती थी।

पाकिस्तान बनने के बाद बाबाजी के सेवकों ने उत्तर भारत में अनेक स्थानों पर बाबा भूमनशाहजी के मंदिर उनकी मधुर स्मृति में बनाए हैं जहाँ प्रतिदिन श्रद्धा एवं प्रेमपूर्वक बाबाजी की पूजा-अर्चना होती है।

उनमें से सबसे बड़ा स्थान गाँव संघरसाधां, जिला सिरसा (हरियाणा) में है। इस डेरे के वर्तमान प्रमुख पूज्य महन्त बाबा ब्रह्मदासजी हैं। यहाँ से कुछ किलोमीटर दूर बाबाजी के नाम पर गाँव मल्लेवाला में भी एक अन्य विशाल डेरा है जिसके महन्त पूज्य बाबा सेवादासजी हैं।

बालयति बाबा भूमनशाहजी महाराज के आध्यात्मिक व व्यावहारिक सदुपदेशों को सूत्रों के रूप में इस पुस्तिका में उन्हीं की प्रेरणा से संकलित किया गया है। यह साधकों, भक्तों और जनसाधारण के जीवनस्तर को ऊपर उठाने में अवश्य लाभकारी सिद्ध होगी। आवश्यकता प्रबुद्ध संतों के उपदेशों को मनन करके आत्मसात् करने की है। आशा है सभी इनसे पूरा लाभ उठाएंगे।

मेरी प्रार्थना है कि बाबाजी के डेरे से ऐसे प्रभावशाली संत निकलें जो बाबा भूमनशाहजी के दिव्य पदचिह्नों पर चलकर अपने अध्यात्मपूर्ण, भगवन्मय एवं सदाचारी जीवन से जनता का पथ-प्रदर्शन करें।

जुलाई, 2009 बाबाजी के चरणों की धूल,

चन्द्रस्वामी उदासीन



बाबा भूमनशाहदेवजी
के
सदुपदेश



1. मनुष्य जीवन का सच्चा उद्देश्य है अनन्त, कालातीत, सच्चिदानन्द, शाश्वत, भागवती चेतना परमात्मा का साक्षात् बोध तथा उससे मिलन। इस भागवती निरपेक्ष चेतना को विभिन्न धर्मों के लोग परमात्मा तथा अन्य भिन्न-भिन्न नामों से सम्बोधित करते हैं।

2. परमात्मा अपने अन्दर-बाहर, ऊपर-नीचे चारों ओर सब दिशाओं में और भूत, भविष्य व वर्तमान काल में व्याप्त भी है पर साथ ही देश-कालातीत भी है। देश, काल, वस्तु तथा कार्य-कारण के भेद से रहित वह अद्वैत, कूटस्थ, अविभाजित तथा अविभाज्य चेतन सत्ता है; वही है आपके जीवन का सार-सर्वस्व। एक सच्चा साधक केवल परमात्मा के लिये ही जीता है और परमात्मा ही के लिये प्राण भी दे देता है।

3. परमात्मा के साक्षात्कार से अथवा मिलन से मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। उसकी सारी शंकाएँ मिट जाती हैं। जैसे सूर्य के उदय से अंधकार तिरोहित हो जाता है ऐसे ही परमात्मा के साक्षात्कार से मनुष्य का अज्ञान और मोहजाल छिन्न-भिन्न हो जाता है तथा वह सदा-सर्वदा अपने स्वरूपभूत आनन्द में डूबा रहता है। प्रभु-उपलब्ध मनुष्य से यह आनन्द सहजरूप से सम्पूर्ण जगत् में प्रेम और शान्ति के रूप में विकीर्ण (radiate) होता रहता है।

4. अपने अन्दर निकटतम होने से अपने ही अंदर परमात्मा की खोज करना अथवा सर्वप्रथम अपने अंदर ही उसका अनुभव करना अत्यन्त युक्तिसंगत है। अतः विवेकशील साधक अपने मन को अन्तर्मुख करके जाप तथा धारणा-ध्यान व समाधि से उस शाश्वत चेतना की अनुभूति का प्रयास करते हैं। जब एक बार आप परमात्मा का अनुभव अपने भीतर कर लेते हैं तो बाहर जगद्रूपी अभिव्यक्ति में भी उसको अनुभव करना कठिन नहीं होता।

5. परमात्मा का निरन्तर स्मरण-ध्यान साधन भी है और साध्य भी। प्रभु-स्मरण चेतना को संयुक्त, एकीकृत और समग्र करता है। इससे मल-विक्षेप भी मिटते हैं और परमात्मा का साक्षात्कार भी होता है।

6. सच्चिदानन्द परमात्मा का अनुभव शुद्ध, शान्त, स्थिर, राग-द्वेष रहित एवं सजग मन में ही, जो महत्वाकांक्षा से मुक्त तथा प्रेम और करुणा से सदा परिपूर्ण हो, प्रकट होता है।

7. काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, राग-द्वेष, ईर्ष्या, महत्वाकांक्षा आदि दोषों से मन अशुद्ध व अस्थिर बनता है और तनावपूर्ण रहता है जिसके कारण उसमें परमात्मा का ज्ञान-प्रकाश प्रकट नहीं होता। अपने मनरूपी दर्पण को इन दोषों से मुक्त करने का निरन्तर प्रयास करें। इसी का नाम पुरुषार्थ अथवा साधना है।

8. जितना मन उपरोक्त मल-विक्षेप के दोषों से मुक्त होगा उतना ही इसे अन्तर्मुख करके ध्यान और परमात्मा के स्मरण में लगाना आसान होगा।

9. मन तभी अन्तर्मुख हो पाता है जब उसकी पकड़ बाह्य जगत् में ढीली हो जाती है। जो मन पदार्थ-परिस्थिति और सांसारिक संबंधों के मोहजाल में फँसा है वह अन्तर्मुख कैसे हो पाएगा? यदि किसी विशेष अभ्यास से वह कुछ समय के लिये अन्तर्मुख हो भी गया तो भी जगत् तथा जगत् के भोगों की वासना उसे पुनः-पुनः बाहर खींच लायेगी। जैसे नाव की रस्सी अगर जमीन के साथ गड़ी खूँटी के साथ बँधी हो तो चाहे दिनभर चप्पू चलाओ किन्तु नाव वहीं की वहीं रहेगी। कई अभ्यासी जब यह कहते हैं कि इतने वर्षों से अभ्यास कर रहे हैं पर आगे कुछ नहीं बढ़ पाये तो इसका कारण यही होता है कि वे नाव की रस्सी खूँटी से बिना खोले ही चप्पू चलाने में लगे हैं।

10. परमात्मा ने जो विवेक दिया है, संतों और शास्त्रों की कृपा से जो मार्गदर्शन मिलता है, उसका आदर करो। संतों के सत्य अनुभवों को अपने जीवन में आत्मसात् करके सत्य के मार्ग पर चलो तो यहाँ भी शांति मिलेगी व परलोक में भी। चुनाव आपके हाथ में है।

11. ऐश्वर्य व आराम को विवेकहीन मनुष्य आनन्द से भ्रमित करके अपना पूरा जीवन ऐश्वर्य व सुविधाओं को जुटाने में व्यतीत कर देता है। सुविधा व आराम की आकांक्षा देती तो है शांति की आशा, पर वस्तुतः उनकी आसक्ति से मिलती है मन की अशांति और बेचैनी! केवल भौतिक सुख-सुविधाओं को जुटाने और उनके संरक्षण में ही जिस मनुष्य का जीवन बीतता है, मृत्यु के समय उसके मन की दशा उस मनुष्य की तरह होती है जिसने जीवनभर कौड़ी-कौड़ी धन जोड़कर बैंक में पैसा रखा हो और वह बैंक दीवालिया हो जाए। जिस धन-वैभव को अमूल्य जीवन खोकर संजोया हो, उस सबको अगर मृत्यु छीन ले तो अंत समय कितना कष्ट होगा! पर मोह-माया के नशे में अन्धे व्यक्ति को यह सब दिखता कहाँ है!

12. याद रखें, परमात्मा ने प्रत्येक मनुष्य के शरीर में एक शक्तिशाली कम्प्यूटर लगा रखा है जिसकी स्मृति अनंत है। वह आपके प्रत्येक कर्म, संकल्प, विचार और भावना को हर समय रिकार्ड करता रहता है। आप कुछ भी प्रयास कर लें आपका प्रत्येक गुप्त से गुप्त कर्म अथवा भावना उसमें पूर्ण रूप से रिकार्ड होती रहती है और उनके अनुसार ही आपके जीवन के शांत अथवा अशांत रहने का आधार विधाता बनाता है।

13. अपनी मृत्यु तथा मृत्यु के समय की अनिश्चितता का भान जिसे सदा बना रहता है उसके जीवन में सुपरिवर्तन जरूर आ जाता है। सभी दोष परमात्मा व मृत्यु को भूलने से ही मन में आते हैं।

14. शरीर में रहते पर्यन्त संसार का छूटना असंभव है। शरीर स्वयं भी तो संसार का अंग है। जगत् की वस्तुओं, परिस्थितियों और संबंधों को भगवान् के नाते स्वीकार करके प्रभुप्राप्ति के मार्ग में उनका सदुपयोग करना ही शरीर व जगत् के बंधन से छूटने का सम्यक् मार्ग है।

15. पशु-पक्षी भी येन केन प्रकारेण अपना तथा अपने छोटे बच्चों का पेट भर लेते हैं, जीवनयापन कर ही लेते हैं। सामान्यतः मनुष्य का समुच्चय जीवन उचित अथवा अनुचित उपायों से पेट भरने के चक्कर में ही बीत जाता है। ऐसे मनुष्यों को बारम्बार पेट (गर्भ) में आना पड़ता है।

16. जब तक 'अन्य' (दूसरे) की अनुभूति रहेगी तब तक स्वार्थ से नितान्त मुक्त होना असंभव है। जहाँ द्वैत मिट जाता है वहाँ स्वार्थ का प्रसंग ही नहीं रहता। अद्वैत की अनुभूति से ऊँची एवं श्रेष्ठतर कोई अन्य अनुभूति नहीं है। प्रभुनाते सभी के साथ एकात्मता की प्रतीति का प्रयास प्रत्येक साधक को निरन्तर करते रहना चाहिये।

17. दीन-दुखियों की सेवा नम्रतापूर्वक व गुप्त रूप से तथा भगवान् के नाते करो तो वह प्रभुभक्ति के तुल्य ही है। इस प्रकार यह सेवा आपको भगवत्स्मरण में भी सहायक होगी तथा इसके द्वारा आप प्रभु के यंत्ररूप होकर दीन-दुखियों के कष्ट भी दूर कर सकेंगे।

18. गरीबों, निस्सहायों के प्रति सहानुभूति रखकर उनकी सहायता करो। आपकी सज्जनता की पहचान अपने से बड़ों, धनवानों, पदाधिकारियों और नेताओं के साथ बर्ताव से नहीं अपितु अपने से छोटों, आश्रितों, निर्धनों और याचकों के साथ किए गए व्यवहार से ही होती है।

19. सज्जन व्यक्ति की परिभाषा पूछते हैं! सज्जन वह है जिसकी आवश्यकता समाज को महसूस होती है। हर एक को उसकी सहानुभूति और शुभकामना सहजरूप से प्राप्त होती रहती है तथा सभी उससे स्नेह रखते हैं। ऐसी ही सज्जनता परमात्मा को आपसे अपेक्षित है।

20. धन, ऐश्वर्य, सम्पत्ति और पद-पदवी तो दुर्जन भी प्राप्त कर लेते हैं, पर मन व आत्मा की शांति उनको स्वप्न में भी नहीं मिलती।

21. मांस, मदिरा, तम्बाकू, नशे आदि के सेवन से सर्वथा बचना चाहिए। ये व्यसन आर्थिक, शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से तो हानिकारक हैं ही, साथ ही साथ पारिवारिक जीवन को भी अस्थिर व अशांत बना देते हैं। आध्यात्मिक साधक को तो इनसे पूर्णतया बचना चाहिए।

22. विनम्रता, मीठी वाणी, ईमानदारी, व सहनशीलता, सबके प्रति सद्‌भावना और स्वस्वीकृत अनुशासन ही मनुष्य जीवन को गौरवशाली बनाते हैं। आप यह गौरव पा सकें तो आपकी जीवनवाटिका भी हरी-भरी एवं सुवासित हो जायेगी।

23. संयम, सदाचार, अहिंसा, प्रेम, करुणा, धैर्य, मानसिक सन्तुलन आदि सद्‌गुणों से मनुष्य की गरिमा बढ़ती है। इन सद्‌गुणों के अभाव में जीवन उस मरुभूमि के तुल्य हो जाता है जहाँ अशांति की आँधी चलती ही रहती है।

24. वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक व नैतिक मूल्यों का सामञ्जस्य तथा शाश्वत परिचेतना की अनुभूति दिव्य जीवन की परिपक्व कला के सम्पादन से ही व्यवहार्य है।

25. भगवत्कृपा का आध्यात्मिक साधना में प्रमुख स्थान है। बिना भगवत्कृपा के किसी भी साधन द्वारा सत्य का साक्षात्कार होना संभव नहीं है। धन्य हैं वे साधकजन जो शरणागति भाव से परमात्मा/सत्य की साधना करते हैं।

श्रीचन्द्रस्वामीजी का आध्यात्मिक साहित्य

- The Practical Approach to Divinity

  अनुवाद

  हिन्दी (भगवत्प्राप्ति), गुजराती, फ्रेंच {"L' Art de la Realisation" (Albin Michel), France}

  जर्मन {"Expendition Erwachen" (Argos Verlag), Germany}

  हिब्रू (इज़राइल में उपलब्ध)

  अरबी (बेरूत, लेबनान में उपलब्ध)

- दिव्य-स्फुरण

  अनुवाद

  अंग्रेजी (Spiritual Gems), फ्रेंच (Le Rosaire des Instructions Spontanees)

- आनंद-दर्पण (बाबा भूमनशाहजी का संक्षिप्त जीवन एवं उपदेश)

  अनुवाद

  अंग्रेजी (Mirror of Bliss)

फ्रेंच (En Compagnie de Babaji)

- Les Entretiens De La Bergerie (Homo Ludens, France)
  सन् 1987 में स्वामीजी के योरोप प्रवास की अवधि में हुए प्रश्नोत्तरों का (अंग्रेजी/फ्रेंच-दो भाषाओं में) संकलन
- Song of Silence – I (Life sketch of Swamiji & questions-answers)
  अनुवाद : फ्रेंच (Le Chant Du Silence I)
- Song of Silence – II (questions & answers)
- चन्द्र-प्रभास (परमसंत श्रीचन्द्रस्वामीजी उदासीन का जीवन चरित्र एवं उपदेश)

भारतीय संस्करण निम्न पते पर उपलब्ध

साधना केन्द्र आश्रम
ग्राम-डुमेट, पोस्ट-अशोक आश्रम (डाकपत्थर),
जिला-देहरादून, उत्तराखण्ड, पिन-248125

